महर्षि दयानन्द सरस्वती का संक्षिप्त परिचय

भारत के महान ऋषि मुनियों की परम्परा में, जिन्होंने इस देश जाति की जाग्रति और उन्नति के लिए अत्यंत विशेष कार्य किया उनमें महर्षि दयानंद सरस्वती जी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जन्म १२ फरवरी १८२४ को टंकारा (गुजरात) में हुआ। पिता का नाम करसन जी तिवारी तथा माता का नाम अमृतबाई था। जन्मना ब्राह्मण कुल में उत्पन्न बालक मूल शंकर को शिवरात्रि के दिन व्रत के अवसर पर बोध प्राप्त हुआ। वह सच्चे शिव की खोज के लिए १६ वर्ष की अवस्था में अचानक गृह त्याग कर एक विलक्षण यात्रा पर चल दिए ।

मथुरा में गुरु विरजानन्द जी से शिक्षा प्राप्त की एवं इस मूल बात को समझा कि देश की वर्तमान अवस्था में दुदर्शा का मूल कारण वेद के सही अर्थों के स्थान पर गलत अर्थों प्रचलित हो जाना है। इसी कारण से समाज में धार्मिक आडम्बर, अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियों का जाल फैल चुका है और हम अपने भारत देश में ही दूसरों के गुलाम हैं। देश की गरीबी, अशिक्षा, नारी की दुर्दशा, भाषा और संस्कृति के विनाश को देखकर दयानन्द अत्यन्त द्रवित हो उठे। कुछ समय हिमालय का भ्रमण कर और तप, त्याग, साधना के साथ वे हरिद्वार के कुम्भ के मेले से मैदान में कूद पड़े। उन्होंने अपनी बात को मजबूती और तर्क के साथ रखा। विरोधियों के साथ शास्त्रार्थ वार्तालाप करके सत्य को स्थापित करने का प्रयास किया। उनके जीवन का एक ही लक्ष्य था कि जो सत्य है उसको जानो और फिर उसको मानो उन्होंने "सत्य को ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए का प्रेरक वाक्य भी दिया। सभी धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक विषयों पर अपनी बात कहने के लिए उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश नाम के कालजयी ग्रन्थ की रचना की। उन्होंने पूरे देश का भ्रमण किया और सारा भारत उनका कार्यक्षेत्र रहा। गौरक्षा, हिन्दी रक्षा, संस्कृत भाषा की उपयोगिता, स्वदेश, स्वदेशी, स्वभाषा, स्वाभिमान के सन्दर्भ में उन्होंने पहली बार जागृति पैदा की। जीवन को अक्षुण्ण न समझते हुए उन्होंने अपने कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए १८७५ में आर्यसमाज की मुम्बई में स्थापना की।

वेद के गलत अर्थों की हानि देखकर उन्होंने वेद के वास्तविक भाष्य को दुनिया के सामने रखा और लिंगभेद और जातिभेद से उठकर “वेद पढ़ने का अधिकार सबको है” की घोषणा की।

धार्मिक अंधविश्वासों, सामाजिक कुरीतियों आदि पर जमकर प्रहार किया। स्त्री शिक्षा जो उस समय की सबसे बड़ी जरूरत थी, उसकी उन्होंने सबसे बड़ी वकालत की और समाज के एक बहुत बड़े वर्ग को उंच-नीच के भेद-भाव के चलते अलग-थलग कर दिया था, उसको उन्होंने समाज की मुख्य धारा के साथ लाने के लिए छुआ-छूत और ऊँचनीच समाज की सबसे बड़ी बुराई बताते हुए उनके जीवन स्तर को उठाने तथा शिक्षा के लिए कार्य करने का आह्वान किया।

अपनी बातों को स्पष्टवादिता से कहने के कारण अनेक लोग उनके विरोधी बन गए और अलग-अलग स्थानों पर, अलग-अलग तरीकों से १७ बार जहर देकर प्राण हरण की कोशिश की। लेकिन दयानन्द ने कभी अपने नाम के अनुरूप किसी को दण्ड देना या दिलवाना उचित न समझा।

अंग्रेज अफसर द्वारा ब्रिटिश साम्राज्य की उन्नति की कामना की प्रार्थना करने पर उनका यह कहना कि मैं तो हमेशा ब्रिटिश साम्राज्य के शीघ्र समाप्ति की कामना किया करता हूं उनकी निर्भीकता को दर्शाता है।

ब्रह्मचर्य का बल, सत्यवादिता का गुण उनके जीवन की एक विशेष पहचान थी। भक्तों के यह कहने पर कि आप ऐसा न कहें जिससे कि बड़े-बड़े आफिसर नाराज हो जाएं उत्तर में महर्षि दयानन्द का यह कहना कि चाहे मेरी अंगुली की बाती बनाकर ही क्यों न जला दी जाएं मैं तो केवल सत्य ही कहूंगा।

अनेक राजाओं द्वारा जमीन देने की, मन्दिरों की गद्दी देने की इच्छा के बावजूद दयानन्द ने कभी किसी से कुछ स्वीकार करना उचित नहीं समझा। १८५७ के क्रान्ति संग्राम से वे लगातार देश को आजाद कराने के लिए प्रयत्नशील रहे और अपने शिष्यों को इसकी निरन्तर प्रेरणा दी। परिणाम स्वरूप श्यामजी कृष्ण वर्मा, सरदार भगत सिंह के दादा सरदार अर्जुन सिंह, स्वामी श्रद्धानन्द लाला लाजपत राय जैसे महान बलिदानियों की एक लम्बी श्रृंखला पैदा की।

वे देश के नवयुवाओं को कौशल सीखने के लिए जर्मनी भेजने के इच्छुक थे। वे अपने देश में स्वदेशी वस्त्रों के पहनने और कारखाने लगाने के प्रबल पक्षधर थे। उन्होंने अनेक देशी राजाओं के साथ वार्तालाप कर उन्हें स्वदेशी के लिए प्रेरित किया। साथ ही तत्कालीन सभी मुख्य महानुभावों केशवचन्द्र सेन, गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर के पिता, महादेव गोविन्द रानाडे, पण्डिता रमाबाई, महात्मा ज्योतिबा फूले, एनिबेसेंट, मैडम ब्लेटवस्की आदि के साथ वार्ता कर उन्हें एक सत्य के मार्ग पर सहमत करने का प्रयास किया। विभिन्न मतों के मुख्य महानुभावों के साथ चर्चा करके सहमति के बिन्दुओं पर एक साथ कार्य करने के लिए आह्वान किया। मानव मात्र की उन्नति के लिए निर्दिष्ट १६ संस्कारों पर विस्तृत व्याख्या लिखी।

प्रजातन्त्र की आवश्यकता पर योग की आवश्यकता पर पर्यावरण के सन्दर्भ में, हर विषय पर अपनी बात रखी।

६ फुट ९ इंच के ऊँचे कद के साथ गौर वर्णधारी, अद्भुत ब्रह्मचर्य के स्वामी एवं योगी महर्षि दयानन्द सरस्वती ने प्रत्येक व्यक्ति की उन्नति के लिए शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को आवश्यक बताया। मात्र ५९ वर्ष की आयु में वैदिक सत्य की निर्भीक उदघोषणा के कारण षडयन्त्रों के चलते १८८३ के अंत में उन्हें जोधपुर में जहर दे दिया गया। जिस विष से वे अपने शरीर की रक्षा न कर सके। विष देने वाले को अपने पास से धन देकर विदा किया, ताकि राजा उसे दण्डित न कर दे, का विलक्षण उदाहरण दयानन्द की दया में ही मिल सकता है । अन्ततः दीपावली की सांय ३० अक्तूबर १८८३ में उनका निर्वाण अजमेर में हुआ।

उनके जीवन की बहुत बड़ी सफलता उनके शिष्यों द्वारा किये गए कार्यों में दिखी हजारों शिष्यों की लम्बी श्रृंखला ने सारे विश्व में उनकी इच्छानुसार अनेकोनेक संस्थाओं की स्थापना की। समाज की कुरीतियों के विरुद्ध कार्य करने के लिए बलिदान देने वाले भी उनके शिष्य थे और देश के लिए बलिदान होने वालों की लम्बी श्रंखला में उनकी शिष्यावली थी। आज उनके द्वारा बनाए गए आर्यसमाज की शिक्षा के क्षेत्र में, सामाजिक कार्यों में स्वास्थ्य सेवा में, महिला उत्थान में, युवा निर्माण में, एवं राष्ट्र के प्रति जिम्मेदारियों के काम में विश्व के ३० देशों और भारत के सभी राज्यों में १०००० से अधिक सशक्त सेवा इकाइयों के साथ सेवारत हैं।